प्रतिफल [CONSIDERATION]

भारतीय संविदा अधिनियम की धारा 10 के अनुसार सभी करार (Agreements) संविदा हैं यदि वे सक्षम पक्षकारों की स्वतंत्र सहमति से वैध उद्देश्य के लिये तथा वैध प्रतिफल के लिए किये गये हैं तथा विधि द्वारा स्पष्ट रूप से शून्य घोषित नहीं किये हैं अर्थात् धारा 10 के द्वारा प्रतिफल को संविदा के निर्माण में एक आवश्यक तत्व घोषित किया गया है। इसी

प्रकार संविदा अधिनियम की धारा 25 स्पष्ट रूप से घोषित करती है कि बिना प्रतिफल के करार शून्य होता है।[1]

अतः उपरोक्त दोनों धाराओं से स्पष्ट है कि प्रतिफल संविदा के निर्माण के लिये एक आवश्यक तत्व है, बिना प्रतिफल के करार विधि द्वारा प्रवर्तनीय नहीं होता।

प्रतिफल का महत्व :

एन्सन के अनुसार साधारण संविदा के निर्माण के लिये प्रतिफल एक आवश्यक तत्व है। बिना प्रतिफल की अनौपचारिक प्रतिज्ञा अंग्रेजी विधि में प्रवर्तनीय नहीं होती भले ही वचनदाता ने कोई उत्तरदायित्व ले लिया हो। उसी प्रकार लॉर्ड डेनिंग ने अपने विचार प्रकट करते हुए इस बात को विशेष रूप से कहा है कि संविदा के निर्माण में प्रतिफल एक आवश्यक आवश्यकता है।[2] प्रतिफल के महत्व को समझाते हुए लॉर्ड चीफ बेरीन स्काइनर ने रेन बनाम ह्यूज[3] के वाद में कहा कि इसमें संदेह नहीं कि प्रत्येक व्यक्ति का कर्तव्य है कि वह अपने वचन का पालन करे, चाहे उसे बदले में कुछ प्राप्त होता हो अथवा नहीं, यही प्रकृति का नियम है। किन्तु दूसरी ओर यह भी सत्य है कि इस देश की विधि में यदि कोई संविदा बिना प्रतिफल के है तो उसको विधि द्वारा प्रवर्तनीय कराने का न तो कोई साधन है, न ही कोई उपचार।

प्रस्ताव एवं स्वीकृति तो संविदा के पक्षकारों को समीप लाते हैं परन्तु प्रतिफल दोनों पक्षकारों के इस आशय को स्पष्ट करता है कि वे संविदात्मक दायित्वों का निर्वहन करने के इच्छुक हैं। अतः प्रतिफल वैध संविदा के अस्तित्व का बाह्य प्रमाण है। बिना प्रतिफल के करार एक व्यर्थ वचन मात्र है जो किसी प्रकार का वैधानिक दायित्व उत्पन्न नहीं करता।

प्रतिफल की परिभाष।

साधारण रूप में प्रतिफल वह मूल्य है जो वचनदाता की प्रतिज्ञा के बदले वचनग्राही द्वारा दिया जाता है। वैसे विभिन्न विद्वानों ने प्रतिफल की परिभाषा भिन्न भिन्न प्रकार से

की है । उदाहरणार्थ न्यायाधीश पेटर्सन के अनुसार प्रतिफल विधि की दृष्टि में किसी मूल्यवान वस्तु को कहते हैं ....वह वादी को कोई लाभ हो सकता है तथा प्रतिवादी को कोई हानि या उत्तरदायित्व । एन्सन के अनुसार 'प्रतिफल प्रतिज्ञा के बदले में वचनग्राही के द्वारा किया गया कोई कार्य अथवा लिया गया कोई उत्तरदायित्व होता है'। न्यायाधीश पोलक के अनुसार 'प्रतिफल ऐसा मूल्य है जिसके द्वारा किसी अन्य व्यक्ति का वचन क्रय किया जाता है तथा इस मूल्य के बदले में दिया गया वचन बाध्यकारी होता है।

सर्वोत्तम परिभाषा क्यू बनाम मोसा[4] के वाद में न्यायाधीश लश (Lush) ने इस प्रकार दी है। ....वैधानिक दृष्टि से एक मूल्यवान प्रतिफल किसी पक्षकार को प्राप्त होने वाले अधिकार हित, लाभ हो सकता है, अथवा दूसरे पक्ष द्वारा दिखाया गया धैर्य उठाई गई क्षति अथवा लिया गया उत्तरदायित्व हो सकता है।[5]

इस परिभाषा से यह स्पष्ट होता है कि प्रत्येक परिस्थिति में वचनदाता को होने वाला लाभ ही प्रतिफल नहीं कहा जायगा अपितु वचनग्राही द्वारा उठाई गई हानि अथवा लिया हुआ उत्तरदायित्व वचनदाता के लिये पर्याप्त प्रतिफल माना जा सकता है।

चेशायर तथा फिफुट के अनुसार भी प्रतिफल को वचन का मूल्य घोषित किया गया है। उदाहरण के लिये :- राम अपनी कार श्याम को 25 हजार रुपये में बेचने को सहमत होता है। इससे व्यवहार में राम के लिये अपने वचन का प्रतिफल 25 हजार रुपये हैं तथा श्याम को अपने वचन का प्रतिफल एक कार है।

'अ' द्वारा चंदा देने के वचन पर विश्वास करके 'ब' ने कोई कार्य प्रारम्भ कर दिया तथा उत्तरदायित्व ग्रहण कर लिया। न्यायालय ने निर्णय दिया कि 'अ' के वचन पर 'ब' द्वारा लिया गया उत्तरदायित्व 'अ' के लिये पर्याप्त प्रतिफल है।

भारतीय संविदा अधिनियम की धारा 2 (डी) के अनुसार – "जब वचनदाता की इच्छा पर वचनग्राही या किसी अन्य व्यक्ति ने कोई कार्य किया हो या करने से विरत रहा हो, करता हो या करने से विरत रहता हो अथवा करने या विरत रहने का वचन देता हो, तो ऐसा कार्य या विरति वचन के लिये प्रतिफल कहलाता है।"6.

संविदा अधिनियम की परिभाषा व्यावहारिक परिभाषा है। संक्षेप में, प्रतिफल से तात्पर्य उस वस्तु या वचन से है जिसे किसी वचन के बदले में स्वीकार किया गया है या स्वीकार करने की सहमति दी गई हो। यह वचनदाता को कुछ लाभ अथवा वचनग्रहीता को कुछ हानि या उत्तरदायित्व के रूप में भी हो सकता है।

प्रतिफल के आवश्यक तत्व।

1. प्रतिफल वचनदाता की इच्छा पर दिया जाना चाहिये।

धारा 2 (डी) की परिभषा के अनुसार प्रतिफल का यह प्रथम आवश्यक तत्व है कि वचनग्रहीता या किसी अन्य व्यक्ति का कार्य या विरति वचनदाता की इच्छा या प्रार्थना पर किया जाना चाहिये। वचनदाता की इच्छा पक्षकारों के व्यवहार से भी जानी जा सकती है। अर्थात् जब तक कोई कार्य वचनदाता की इच्छा पर नहीं किया गया हो वह कार्य वैध प्रतिफल नहीं माना जा सकता। स्वेच्छा से किया गया कार्य प्रतिफल नहीं हो सकता। किसा अन्य पक्षकार की प्रार्थना या वचनदाता की इच्छा के बिना किया गया कार्य ऐच्छिक या वैकल्पिक या स्वेच्छा से किये गये कार्य कहलाते हैं। ऐसे कार्य वैध प्रतिफल का रूप नहीं ले सकते। यह आवश्यक नहीं कि वचनदाता को प्रतिफल से लाभ हो, परन्तु आवश्यक यह है कि कार्य वचनदाता की इच्छा से किया गया हो। यदि कार्य वचनदाता की इच्छा से नहीं किया गया है तो वचन-ग्रहीता पर कोई दायित्व नहीं आयेगा। उदाहरण के लिये दुर्गा प्रसाद बनाम बल्देव[7] के वाद

में प्रतिवादी ने वादी से अपनी दुकान पर बिके माल पर कमीशन देने का वायदा किया। उक्त दुकान वादी ने जिलाधीश की इच्छा पर बनवाई थी तथा वे आवंटन द्वारा प्रतिवादी को मिली थी। वादी ने जब प्रतिवादी से कमीशन की मांग की तो प्रतिवादी ने देने से इन्कार कर दिया। वादी ने प्रतिवादी के विरुद्ध संविदा उल्लंघन का वाद प्रस्तुत किया। न्यायालय ने निर्णित किया कि दुकानों के निर्माण का कार्य वचनदाता की इच्छा पर नहीं हुआ परन्तु जिलाधीश की इच्छा पर हुआ / अतः प्रतिवादी संविदा भंग का दोषी नहीं है और वादी क्षतिमूल्य प्राप्त करने का अधिकारी नहीं है।

दूसरी ओर, यदि वचनदाता की इच्छा पर कार्य प्रारम्भ कर दिया गया है तो वह कार्य उनकी प्रतिज्ञा का उचित प्रतिफल होगा, चाहे उसे उस प्रतिफल से कोई लाभ नहीं होता हो। उदाहरण के लिये केदारनाथ बनाम गोरी मोहम्मद [8] के वाद में हावड़ा म्युनिसपैलिटी ने एक टाउन हॉल बनाना चाहा। इस कार्य के लिये धन जुटाने के लिये चन्दा इक्ट्ठा किया गया। प्रतिवादी ने चंदे की लिस्ट में अपने नाम के आगे 100 रु. अंकित कर दिये। इस प्रकार से एकत्रित धन के आधार पर वादी ने हॉल बनवाना प्रारम्भ कर दिया तथा वादी ने एक ठेकेदार से हॉल के निर्माण का संविदा भी किया। परन्तु प्रतिवादी ने बाद में 100/– रु. देने से इन्कार कर दिया। प्रतिवादी का तर्क था कि इस 100/– पये की राशि के दान से उसे कोई लाभ नहीं होगा अतः वह देने को बाध्य नहीं है। परन्तु न्यायालय ने वादी के हक में निर्णय देते हुए धारित किया कि प्रतिवादी ने दानसूची में अपना नाम लिखा इससे वादी ने उत्तरदायित्व लिया अर्थात् टेकेदार से संविदा किया इस प्रकार उत्तरदायित्व लेना प्रतिवादी के लिये पर्याप्त प्रतिलिपि है। अतः प्रतिवादी 100/– रु. देने को बाध्य है क्योंकि वादी ने प्रतिवादी की इच्छा पर कार्य प्रारम्भ कर दिया था। यहां यह बात ध्यान देने योग्य है कि जब तक वादी ने प्रतिवादी की इच्छा पर कोई कार्य नहीं किया है अथवा दायित्व नहीं लिया है तब तक वादी प्रतिवादी को उत्तरदायित्व घोषित नहीं कर सकता। उदाहरण के लिये अब्दुल अजीज बनाम मासूम अली[9] के वाद में मासूम अली ने एक मस्जिद के पुनर्निर्माण के लिये 500/-रु. देने का वायदा किया। अब्दुल अजीज ने इन रुपयों को वसूल करने के लिये मासूम अली

के विरुद्ध वाद प्रस्तुत किया। न्यायलय ने धारित किया कि जिस व्यक्ति ने चंदा देने का वायदा किया उसे प्रतिज्ञा के बदले में कुछ भी नहीं मिला और न ही अब्दुल अजीज ने, जिसने प्रतिज्ञा प्राप्त की थी, कोई हानि या उत्तरदायित्व नहीं लिया था। अतः मासूम अली की प्रतिज्ञा विधि द्वारा प्रवर्तनीय नहीं है। इसी प्रकार आदित्य बनाम प्रेम चन्द[10]. के वाद में वादी ने प्रतिवादी को एक ठाकुरजी की प्रतिमा लाने की प्रर्थना की। प्रतिवादी ने लाने का वचन भी दिया। वादी ने प्रतिमा प्रतिष्ठा के समय अनेकों व्यक्तियों को भोजन पर आमंत्रित किया। प्रतिवादी उक्त प्रतिमा को नहीं ला सका फलस्वरूप सभी लोग बिन भोजन किये वादी के घर से लौट गये। वादी ने प्रतिवादी के विरुद्ध संविदा भंग का वाद प्रस्तुत किया एवं भोजन सामग्री के व्यर्थ जाने पर क्षतिमूल्य की प्रार्थना की। न्यायालय ने निर्णय देते हुए कहा कि वादी ने अनेकों व्यक्तियों को खाने पर प्रतिवादी की इच्छा पर नहीं बुलाया था अतः बुलाने का कार्य वचनदाता की इच्छा पर नहीं किया गया इसमें प्रतिफल नहीं था अतः वादी क्षतिमूल्य प्राप्त करने का अधिकारी नहीं है। न्यायाधीश घोष ने कहा कि "यदि प्रतिफल की परिभाषा को पढ़ा जाये तो मुझे यह कहने में बड़ी कठिनाई होगी कि वचनग्रहीता ने वचनदाता की इच्छा पर कोई कार्य किया हो। वाद के तथ्यों से ऐसा प्रतीत नहीं होता है कि प्रतिवादी ने वादी से बहुत से लोगों को बुलाने को कहा हो। प्रतिफल तभी उत्पन्न होगा जबकि कार्य वचनदाता की इच्छा पर किया गया हो। चाहे लाभ वचनदाता को न होकर किसी अन्य व्यक्ति को हुआ हो। इसी सिद्धांत का अनुसमर्थन नेशनल बैंक ऑफ अपर इण्डिया बनाम बंशीधर[11]. के वाद में किया गया। इस वाद में 'अ' ने 'ब' से कहा कि वह 'स' को 20,000/– रु. दे दे। 'ब' ने 'स' को उक्त राशि दे दी। न्यायालय ने निर्णय दिया कि यहां पर प्रतिफल उत्पन्न हो गया तथा 'अ' 'ब' को रुपये देने को उत्तरदायी है क्योंकि 'ब' ने 'स' को 'अ' की इच्छा पर रुपया दिया था। इसी सिद्धान्त का अनुमोदन प्रिवी कौसोल ने बैंकटागिरी बनाम कृष्णराव[12] के वाद में किया। इस वाद में न्यायालय ने धारित किया कि प्रतिफल वैध प्रतिफल तभी माना जायगा जबकि वह वचनदाता की इच्छा पर दिया गया हो।

२- प्रतिफल वचनग्राही या उसकी ओर से किसी अन्य व्यक्ति द्वारा दिया जाना चाहिये –

आधुनिक अंग्रेजी विधि का यह प्रतिपादीत सिद्धान्त है कि प्रतिफल वचनग्राही के द्वारा ही दिया जाना चाहिये परन्तु भारतीय संविदा अधिनियम की धारा 2 (डी) के अन्तर्गत प्रतिफल वचनग्राही या उसकी ओर से किसी अन्य व्यक्ति के द्वारा भी दिया दिया जा सकता है। भारतीय सिद्धान्त अंग्रेजी सिद्धान्त के पुराने सिद्धान्त पर आधारित है। यह सिद्धान्त ड्यूटन बनाम पूले[13] के वाद में 1677 में प्रतिपादित किया गया था। इस वाद में पूले को अपनो लड़की की शादी के लिये कुछ धन की आवश्यकता थी अतः वह अपनी भूमि में खड़े हुए वृक्षों को बेचना चाहता था उसके लड़के (प्रतिवादी) ने वचन दिया कि यदि वह उक्त वृक्षों को न बेचे तो वह एक हजार पौण्ड अपनी बहन को दे देगा। पूले ने उन वृक्षों को नहीं बेचा परन्तु प्रतिवादी ने एक हजार पौण्ड लड़की को देने से इन्कार कर दिया। पूले की मृत्यु के पश्चात् उस लड़की ने अपने पति (वादी) के द्वारा प्रतिवादी के विरुद्ध न्यायालय में वाद प्रस्तुत किया।

इस वाद में प्रतिफल निश्चित रूप से वाद की ओर से नहीं आया था किन्तु पिता की ओर से अर्थात् वादी संविदा का पक्षकार नहीं था। न्यायालय ने बाप–बेटी के संबंधों को ध्यान में रखते हुए यह स्वीकार किया कि प्रतिफल विविक्षित रूप से वादी की ओर से ही आया था। अतः प्रतिवादी को एक हजार पौण्ड लड़को को देने के लिये बाध्य किया। दूसरे शब्दों में न्यायालय ने धारित किया कि इसमें संदेह नहीं कि प्रतिवादी ने वचन अपने पिता को दिया था और वही वाद लाने के योग्य था किन्तु इस संविदा का उद्देश्य वादो को एक हजार पौण्ड प्राप्त होना था अतः प्राकृतिक विधि की दृष्टि में यह कोरा अन्याय होगा कि प्रतिवादी वृक्षों को भी अपने पास रख ले और वचनानुसार लड़की को एक हजार पौण्ड भी न दे। ड्यूटन बनाम पूले का नियम करीब 200 साल तक कामन विधि में चलता रहा। परन्तु 1861 में ट्वीडल बनाम एटकिंसन[14] के वाद में क्वींस बेंच ने इस सिद्धान्त को मानने के लिये अस्वीकार कर दिया। इस वाद में लड़के-लड़की जिनकी शादी होनी थी उन दोनों के पिताओं में एक लिखित समझौता हुआ कि शादी के

पश्चात् वे दोनों पति (वादी) को कुछ धन देगें। यदि कोई पक्षकार धन देने में असमर्थ होगा तो पति न्यायालय के द्वारा उस धन को प्राप्त करने का अधिकारी होगा। लड़की का पिता धन को देने में असमर्थ रहा अतः वादी ने प्रतिवादी की मृत्यु के पश्चात् उसकी सम्पत्ति के व्यवस्थापकों के विरुद्ध संविदा भंग का वाद प्रस्तुत किया। परन्तु न्यायालय में वादों को खारिज करते हुए प्रतिपादित किया कि वादी धन प्राप्त करने का अधिकारी नहीं है क्योंकि संविदा में प्रतिफल वादी अर्थात् पति के द्वारा नहीं आया था और न ही पति उस संविदा का पक्षकार था। न्यायालय ने स्पष्ट रूप से धारित किया कि प्रतिफल वचनग्रहीता द्वारा ही दिया जाना चाहिये न कि किसी अन्य व्यक्ति के द्वारा। एक व्यक्ति जो संविदा का पक्षकार नहीं है और जिसने संविदा के लिये किसी भी प्रकार का प्रतिफल नहीं दिया है वह संविदा में कोई लाभ प्राप्त नहीं कर सकता। चाहे संविदा उसके लाभ के लिये किया गया हो। इस सिद्धान्त को संविदा को प्रिविटी का सिद्धान्त भी कहते हैं जिसका तात्पर्य यह है कि संविदा संविदा के पक्षकारों के मध्य ही होता है। तीसरा पक्षकार संविदा का लाभ प्राप्त नहीं कर सकता। इस सिद्धान्त को डनलप टायर कम्पनी बनाम सेलफ्रिज एण्ड कम्पनी[15] के वाद में पुनःस्थापित किया गया। इस वाद में वादी ने ड्यू एण्ड कम्पनी से विक्रय का संविदा किया जिसके अन्तर्गत ड्यू एण्ड कम्पनी को निर्धारित मूल्य सूची से कम कीमत पर कॉल नहीं बेचना था। ड्यू एण्ड कम्पनी ने सेलफ्रिज एण्ड कम्पनी (प्रतिवादी) से इसी प्रकार का संविदा किया परन्तु प्रतिवादी ने मूल्य सूची से कम मूल्य पर माल बेचकर संविदा भंग किया। वादी द्वारा प्रतिवादी के विरुद्ध संविदा भंग का वाद प्रस्तुत किया गया परन्तु लोर्ड विस्काउन्ट हैलडेन ने निर्णय देते हुए कहा कि अंग्रेजी विधि में यह प्रतिपादित सिद्धान्त है कि संविदा का पक्षकार ही संविदा के प्रति वाद ला सकता है। संविदा से अपरिचित व्यक्ति का संविदा के प्रति कोई अधिकार नहीं बनता क्योंकि न तो प्रतिफल उसके द्वारा आय है और न ही संविदा के प्रति कोई अधिकार नहीं बनता। क्योंकि न तो प्रतिफल उसके द्वार आया है और न ही वह संविदा का पक्षकार है। इस वाद में भी उपरोक्त सिद्धान्त क प्रतिपादित किया गया कि प्रतिफल वचनग्रहीता द्वारा ही दिया जाना चाहिये।

भारतीय विधि :

संविदा अधिनियम की धारा 2 (डी) के अनुसार प्रतिफल वचनग्रहीता अथवा किसी अन्य व्यक्ति द्वारा भी दिया जा सकता है अर्थात् भारतीय विधि में प्रतिफल न केवल वचनग्रहीता द्वारा अपितु किसी अन्य व्यक्ति के द्वारा भी दिया जा सकता है जो कि संविदा का पक्षकार नहीं है। उदाहरण के लिए चिनैय्या बनाम रमैय्या [16] के वाद में एक वृद्धा जो कि प्रतिवादी की माँ थी ने अपनी पुत्री के नाम सारी संपत्ति दान कर दी साथ ही यह शर्त भी रख दी कि वह लड़की अपनी मौसी (प्रतिवादी) को 65 रुपये प्रतिवर्ष भरण-पोषण के लिये देती रहेगी। लड़की ने उक्त राशि को देने का वचन भी दिया परन्तु बाद में लड़की ने मौसी को उक्त धन देने से इंकार कर दिया। अत: मौसी ने लड़की के विरुद्ध यह वाद प्रस्तुत किया। प्रतिवादी की तरफ से यह तर्क दिया कि प्रतिफल वादी के द्वारा नहीं दिया गया था किन्तु उसकी बहन की ओर से आया था। दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि वादी संविदा की पक्षकार नहीं थी। न्यायालय ने इस तर्क को अस्वीकार करते हुए निर्णय दिया कि भारतीय विधि के अन्तर्गत प्रतिफल "किसी अन्य व्यक्ति" के द्वारा भी दिया जा सकता है इस वाद में न्यायालय उसी निष्कर्ष पर पहुंचा जिस पर डयूटन बनाम पूले के वाद में न्यायालय ने अपना निर्णय दिया। इसी संबंध में सैमुअल पिल्लाई बनाम अजन्था पिल्लाई [17] का वाद भी महत्वपूर्ण वाद है। इस वाद में एक रियासत के व्यवस्थापक ने एक उत्तराधिकारी को उसका हिस्सा देने का वचन इस शर्त पर दिया कि वह ऋणदाता को ऋण अदा कर देगा। उत्तराधिकारी इस बात पर सहमत भी हो गया परन्तु बाद में उसने ऋणदाता को ऋण अदा नहीं किया। अत: ऋणदाता ने उत्तराधिकारी के विरुद्ध न्यायालय में वाद प्रस्तुत किया। इस वाद में भी वादी न तो संविदा का पक्षकार था और न ही उसके द्वारा कोई प्रतिफल दिया गया था। तथापि अधिनियम की धारा 2 (डी) की भाषा को देखते हुए निर्णय दिया कि वादी वाद लाने योग्य था और प्रतिवादी ऋण चुकाने को उत्तरदायी है।

उपरोक्त वादों से यह स्पष्ट होता है कि भारतीय विधि के अन्तर्गत प्रतिफल वचनग्राही अथवा किसी अन्य व्यक्ति के द्वारा दिया जा सकता है। यदि प्रतिफल किसी अन्य व्यक्ति के द्वारा भी दिया गया है तो वचनग्राही संविदा के प्रति वाद ला सकता है। वह संविदा से अपरिचित नहीं माना जायगा। परन्तु संविदा के प्रति ऐसा व्यक्ति वाद नहीं ला सकता जो न तो संविदा का पक्षकार है और न ही उसने संविदा के लिए प्रतिफल दिया है। भले ही संविदा उसके लाभ के लिए किया हो परन्तु इस विषय पर भारतीय विधि में मतैक्य नहीं है। भारत में ऐसे भी वाद हुए हैं जिनमें न्यायालय ने ऐसे पक्षकारों को संविदा के प्रति वाद लाने का अधिकार प्रदान किया है जो न तो संविदा के पक्षकार थे और न ही जिन्होंने संविदा के लिये प्रतिफल दिया। उदाहरण के लिये ख्वाजा मोहम्मद खान बनाम हुसैनी बेगम[18] के वाद में लड़की के श्वसुर को लड़की के पिता ने शादी की बातचीत के समय लड़की को 500 रु. प्रतिमाह पानदान का खर्चा देने का वचन दिया। यह राशि श्वसुर की अचल सम्पति से मिलनी थी बाद में श्वसुर ने लड़की को रुपया देने से इन्कार कर दिया। वादी (लड़की) ने श्वसुर के विरुद्ध न्यायालय में वाद प्रस्तुत किया। न्यायालय ने निर्णय देते हुए कहा कि लड़की वाद लाने योग्य है भले ही वादी संविदा का पक्षकार नहीं है। प्रिवी कौन्सिल ने निर्णय देते हुए कहा कि लड़की वाद लाने योग्य है भले ही वादी संविदा का पक्षकार नहीं है। प्रीवि कौन्सिल ने निर्णय देते हुए धारित किया कि भारत में अनेकों समुदायों में विवाह का संविदा अवयस्कों की ओर से उनके संरक्षकों द्वारा किया जाता है। अतः भारतीय परिवेश में कामन विधि के सिद्धान्त से लागू करना अन्यायपूर्ण होगा। परन्तु इस निर्णय के एक साल पश्चात् ही प्रिवी कौन्सिल ने जमनादास बनाम रामअवतार[19] के वाद में इस सिद्धान्त का अनुपालन नहीं किया। इस वाद में 'अ' ने 40 हजार रुपये में अपनी जायदाद 'बी' के पास बंधक रखकर ऋण के रूप में प्राप्त किये। कुछ समय के पश्चात् 'अ' ने अपनी उस जायदाद को 44 हजार रुपये में 'स' को बेच दी। 'अ' ने 'स' से 40 हजार रु० लेकर शेष 40 हजार रुपये 'ब' को देने के लिये उसके पास छोड़ दिये। 'स' ने 'अ' को वचन दिया कि वह इस राशि को 'ब' को दे देगा। बाद में 'स' ने उस राशि को 'ब' को देने से इन्कार कर दिया। अतः 'ब' ने 'स' के विरुद्ध न्यायालय में वाद प्रस्तुत किया। न्यायालय ने निर्णय दिया कि वादी न तो संविदा का पक्षकार है और न ही प्रतिफल पक्षकार है। अतः वह वाद लाने

योग्य नहीं है। इस सिद्धान्त का पुनःस्थापन कृष्णलाल बनाम प्रमिलावाला दासी[20] के वाद में किया गया। इस वाद में एक व्यक्ति ने अपना बीमा कराते समय बीमे की धनराशि प्राप्त करने के लिए पत्नी को मनोनीत किया। पति की मृत्यु के पश्चात् बीमा कम्पनी ने पत्नी को धन राशि देने से इन्कार कर दिया। पत्नी ने बीमा कम्पनी के विरुद्ध वाद प्रस्तुत किया। न्यायालय ने धारित किया कि चूंकि वादी न तो प्रतिफल में पक्षकार था और न ही संविदा में पक्षकार था अतः वह वाद लाने योग्य नहीं है। न्यायालय ने यह भी स्पष्ट किया कि संविदा अधिनियम की धारा 2 (ड) में प्रतिफल की परिभाषा से ऐसा प्रतीत नहीं होता कि जो व्यक्ति संविदा का पक्षकार नहीं है तथा प्रतिफल उसकी ओर से नहीं आया है वह संविदा से लाभ प्राप्त कर सकता है।

अतः भारतीय विधि में प्रायः यह निश्चित सा हो गया है कि एक व्यक्ति जो संविदा का पक्षकार नहीं है वह संविदा से लाभ प्राप्त ही कर सकता भले ही संविदा उसके हित के लिए किया गया हो। एम. सी. चाको बनाम स्टेट बैंक ऑफ ट्रावनकोट[21] के वाद में सर्वोच्च न्यायालय ने भी इसी सिद्धान्त को अनुमोदित किया है।

भारतीय न्यायालय ने अनेकों वादों में यह स्पष्ट रूप से निर्णय दिया है कि जिस व्यक्ति ने संविदा के लिये न कोई प्रतिफल दिया है और न ही वह संविदा का पक्षकार है वह संविदा से किसी भी प्रकार का लाभ प्राप्त नहीं कर सकता। भले ही संविदा उसके लाभ के लिये ही किया गया हो। यह सिद्धान्त आर्थिक और सामाजिक दृष्टिकोण से वास्तविकता एवं न्याय के विरुद्ध है जबकि संविदा अधिनियम की धारा 2 (डी) में यह स्पष्ट उल्लेख किया गया है कि प्रतिफल किसी अन्य व्यक्ति द्वारा दिया जा सकता है तथा वह व्यक्ति जो संविदा का पक्षकारी नहीं है उस संविदा का लाभ प्राप्त क्यों नहीं कर सकता जबकि संविदा उसके लाभ के लिये किया गया हो। उदाहरण के लिए जब 'अ' और 'ब' के मध्य 'स' के हित के लिए कोई संविदा किया गया है तो 'स' को उस संविदा का लाभ प्राप्त करने का अधिकार क्यों नहीं प्राप्त होगा। इसमें संदेह नहीं कि यदि उक्त सिद्धान्त को मान लिया जाय तो भारतीय न्यायालय

में वादों की बाढ़ आ जायेगी, परन्तु हमें यह भी ध्यान रखना चाहिये कि विधि समाज के लिए होती है न कि समाज विधि के लिये। प्रतिफल की वर्तमान भारतीय विधि में ऐसा परिवर्तन होना चाहिये जिससे कि उन व्यक्तियों को भी संविदा का लाभ प्राप्त हो सके जो संविदा के पक्षकार तो नहीं है परन्तु संविदा उनके लाभ के लिए अवश्य किया गया है। इंगलैण्ड में विधि सुधार समिति ने 1937 में इस विधि में परिवर्तन करने के लिए सुझाव दिया था।

अपवाद :

समयान्तर्गत न्यायालयों ने इस सिद्धान्त के अपवादों का सृजन किया कि संविदा का पक्षकार ही संविदा के प्रतिवाद ला सकता है। निम्नलिखित परिस्थितियों में ऐसे व्यक्ति, जो न तो संविदा के पक्षकार हैं और न ही जिन्होंने प्रतिफल दिया है, वे भी संविदा के प्रतिवाद ला सकते हैं। ये परिस्थितियां निम्नलिखित हैं :

(1) न्यास एवं प्रभार :

न्यास की स्थिति में हितकारी (Beneficiary) उन अधिकारों को प्रवर्तित करवा सकता है जो उसे न्यास के अन्तर्गत प्रदान किये गये हैं यद्यपि वह न्यास स्थापना के संविदा का कोई पक्षकार नहीं है। उदाहरण के लिये राना उमानाथ बख्शसिंह बनाम जंग बहादुर[22] के बाद में उमानाथ को उसके पिता के द्वारा उत्तराधिकार में उसे सारी संपत्ति प्राप्त हुई। इस संपत्ति के प्रतिफल में उमानाथ अपने सौतेले भाई जंगबहादुर को कुछ संपत्ति देने को सहमत हुआ। बाद में उमानाथ द्वारा उक्त संपत्ति को न देने पर न्यायालय ने यह निर्णय दिया कि जंगबहादुर की संपत्ति उमानाथ के पास न्यास के पास न्यास के रूप में थी अतः जंगबहादुर हितकारी के रूप में उक्त संविदा के प्रतिवाद प्रस्तुत कर सकता है।

यदि किसी व्यक्ति के हित में किसी संपत्ति में कोई प्रभार अथवा हित उत्पन्न किया गया है तो भी व्यक्ति संविधा का पक्षकार न होते हुए भी संविदा के लाभ को प्राप्त कर सकता है। जैसे कि ख्वाजा मोहम्मद खान बनाम हुसैनी बेगम[22A] के वाद से स्पष्ट है।

2) पारिवारिक निपटारे :

यदि किसी हिन्दू संयुक्त परिवार के विभाजन पर उसकी किसी सदस्या का भरणपोषण या उसके विवाह के लिये कोई व्यवस्था की गयी है तो वह सदस्या संविदा की पक्षकार न होते हुए भी संविदा की शर्तों का प्रवर्तन कर सकती है। उदाहरण के लिये द्रोपति बनाम रूपतराय[23] के वाद में प्रतिवादी की पत्नी उसके अत्याचारों से दुखी होकर उसे छोड़कर चली गयी। इसके बाद प्रतिवादी ने पत्नी के पिता के साथ संविदा किया कि अब वह पत्नी के साथ सदव्यवहार करेगा और यदि सदव्यवहार न कर सका तो पत्नी को अलग रहने के लिए एवं भरणपोषण के लिये मासिक राशि देगा। प्रतिवादी ने पुनः अपनी पत्नी के साथ दुर्व्यवहार किया। न्यायालय ने पत्नी को प्रतिवादी और अपने पिता के मध्य हुए संविदा की शर्तों को लागू करने का अधिकार प्रदान किया।

3) अभिस्वीकृति एवं विबंधन :

जब संविदा के एक पक्षकार ने पहले ही किसी तीसरे पक्षकार के प्रति दायित्व स्वीकार कर लिया है या प्रतिज्ञा का कुछ भाग पूरा कर दिया है तो उस पक्षकार को संविदा से उत्पन्न होने वाला तीसरे पक्षकार के प्रति दायित्व को अस्वीकार करने से रोक दिया जायेगा।

4) अनुबन्ध के अभिहस्तांकित किये जाने पर अभिहस्तांकित अनुबन्ध से प्राप्त होने वाले अपने अधिकारों को प्रवर्तित करा सकता है। हस्तांकित (Assignment) स्वेच्छा से तथा विधिवत किया जाना चाहिये। उदाहरण के लिये प्रापक किसी व्यक्ति के दिवालिया होने वाले अनुबन्ध का मूल पक्षकार न होते हुए भी दिवालिया के समस्त अधिकार एवं दायित्व प्राप्त करता है।

(5) भूमि से संबंधित संविदा :

संविदा की प्रिविटी का सिद्धांत भूमि के विक्रय के संविदाओं पर लागू नहीं होता। तुल्क बनाम मौक्स है[24] के वाद में सिद्धान्त के द्वारा भूमि का मालिक क्रेता उन सभी दायित्वों को वहन करेगा जिन दायित्वों को विक्रेता करता रहा था। भले ही भूमि के संबंध में संविदा का पक्षकार नहीं था।

(6) अभिकर्त्ता द्वारा विदेश गये संविदाओं को नियोक्ता द्वारा प्रवर्तित कराया जा सकता है भले ही नियोक्ता उन संविदाओं का पक्षकार नहीं रहा हो।

3. **कोई कार्य किया गया है अथवा करने से वर्जित किया गया है :**

इन शब्दों का तात्पर्य यह है कि वचनदाता की इच्छा पर भूतकाल में किया गया कार्य वैध प्रतिफल होता है तथा वर्तमान में किया गया कार्य और भविष्य में किये जाने वाला कार्य भी वैध प्रतिफल माना जायेगा अर्थात् प्रतिफल भूतकालीन हो सकता है, वर्तमान प्रतिफल हो सकता है और भविष्यकालीन भी हो सकता है।

भूतकालीन प्रतिफल :

भूतकालीन प्रतिफल से तात्पर्य है कि संविदा होने से पूर्व किये गये कार्य अर्थात् वचनदाता वचनग्रहीता को वर्तमान में वचन दे रहा है जबकि वचनदाता को प्रतिफल भूतकाल में ही प्राप्त हो चुका है। उदाहरण के लिये राम की प्रार्थना पर श्याम उसके बच्चों की देखभाल करता है। एक वर्ष पश्चात् राम श्याम की सेवा के लिये 100/- देने का वचन देता है। वचनदाता राम के लिये श्याम द्वारा किया गया प्रतिफल भूतकालीन प्रतिफल है।

अंग्रेजी विधि का यह बहुत पुराना सिद्धान्त है कि प्रतिफल और प्रतिज्ञा समकालीन होनी चाहिये। प्रतिफल प्रतिज्ञा का मूल्य होने के नाते प्रतिज्ञा के बदले में तत्काल ही दिया जाना चाहिये। अतः अंग्रेजी विधि के भूतकालीन प्रतिफल को वैध प्रतिफल नहीं माना जाता है। उदाहरण के लिये रोसकोराल बनाम थोमस[25] के वाद में प्रतिवादी ने वादी को एक घोड़ा बिना किसी गारंटी के बेचा। बाद में प्रतिवादी ने वादी घोड़े का अच्छा होने की गारंटी ली। न्यायालय ने धारित किया कि बाद वाला प्रतिफल भूतकालीन प्रतिफल होने के कारण विधि द्वारा लागू नहीं किया जा सकता। इस सिद्धान्त का अनुमोदन ईस्टवुड बनाम कैनियोन[26] के वाद में किया गया है। इस वाद में एक अनाथ लड़की की देखभाल वादी ने अभिभावक के रूप में की। इसके लिये उसने अपना कुछ धन भी खर्च किया। वह धन उसने एक प्रोनोट

पर किसी अन्य व्यक्ति से उधार लिया। जब लड़की वयस्क हो गयी तो उसने वचन दिया कि प्रोनोट पर लिया गया ऋण वह वापिस कर देगी। बाद में लड़की ने उस राशि की अदायगी से इंकार कर दिया। अतः अभिभावक ने लड़की के विरुद्ध न्यायालय में संविदा भंग का वाद प्रस्तुत किया। न्यायालय ने धारित किया कि इस संविदा में वैध प्रतिफल का अभाव है क्योंकि अंग्रेजी विधि में भूतकालीन प्रतिफल वास्तविक प्रतिफल नहीं होता। हाल ही में इनरिमैक आर्डिल[27] के वाद में एक स्त्री ने मकान में कुछ सुधार किये। इन सुधारों के फलस्वरूप जिन व्यक्तियों को वह मकान मिलना था उन्होंने उस स्त्री को 488 पौण्ड देने का वचन दिया। जब स्त्री ने उक्त धन को वसूल करने के लिये न्यायलय में वाद प्रस्तुत किया तो न्यायालय ने धारित किया कि सुधार का कार्य वचन देने से पूर्व किया जा चुका था। अतः उक्त प्रतिफल भूतकालीन प्रतिफल होने के नाते विधि में कोई महत्व नहीं रखता।

प्रार्थना पर किया गया कार्य पर्याप्त प्रतिफल होता है :

अंग्रेजी विधि में भूतकालीन प्रतिफल वैध प्रतिफल नहीं है परन्तु इसका एक अपवाद है कि यदि कार्य वचनदाता की प्रार्थना पर किया जाय तो भूतकालीन प्रतिफल अंग्रेजी विधि के अन्तर्गत वैध प्रतिफल हो सकता है। उदाहरण के लिये लैम्पले बनाम ब्रेटवेट[28] के वाद में प्रतिवादी पर हत्या करने का आरोप था। इस अपराधी ने बचने के लिए उसने वादी से प्रार्थना की कि वह राजा से क्षमादान दिलाने का प्रयत्न करें। वादी ने प्रतिवादी को क्षमादान दिलाने के लिये प्रयास किया और इसमें कुछ धन भी खर्च किया। वादी के प्रयत्नों के कारण प्रतिवादी को क्षमादान प्राप्त भी हो गया। प्रतिवादी ने वादी को 100 पौण्ड देने का वचन दिया परन्तु उक्त राशि कभी नहीं दी। अतः वादी ने प्रतिवादी के विरुद्ध न्यायालय में वाद प्रस्तुत किया। न्यायालय ने निर्णय दिया कि यह प्रतिफल वैध था क्योंकि कार्य वचनदाता की प्रार्थना पर किया गया था।

भारतीय विधि :

भारतीय विधि के अन्तगत धारा 2 (डी) में दी गयी परिभाषा को देखने से यह स्पष्ट होता है कि भूतकालीन प्रतिफल वैध प्रतिफल है। भले ही वह वचनदाता की प्रार्थना पर

किया गया हो अथवा नहीं किया गया हो। अंग्रेजी विधि तथा भारतीय विधि में इस विषय में यही अन्तर है कि अंग्रेजी विधि के अन्तर्गत भूतकालीन प्रतिफल तब ही मान्य होगा जबकि वह वचनदाता की प्रार्थना पर दिया गया हो अन्यथा नहीं। भूतकालीन प्रतिफल हर स्थिति में वैध है। अंग्रेजी विधि के अन्तर्गत यदि भूतकालीन प्रतिफल ऐच्छिक है तो वचनबद्ध नहीं होगा। उदाहरण के लिये 'क' 'ख' के पुत्र को डूबने से बचा लेता है अतः 'ख' 'क' को इनाम देने का वचन देता है। यहां कार्य 'क' ने स्वेच्छा से किया है अतः 'क' इनाम पाने का अधिकारी नहीं है क्योंकि अंग्रेजी विधि में भूतकालीन प्रतिफल वैध प्रतिफल नहीं है जबकि संविदा अधिनियम की धारा 25 (2) के अनुसार उक्त वचन अपवाद के रूप में बाध्य होगा क्योंकि धारा 25 (2) में भूतकालीन कार्य यदि स्वेच्छा से किया गया है तो उसके लिये दिया गया वचन दायित्व उत्पन्न करता है। धारा 25 (2) में हो 2 उदाहरण इस प्रकार दिये गये हैं।

(1) 'क' को 'ख' का बटुआ प्राप्त होता है। 'क' 'ख' को उसका खोया हुआ बटुआ वापस कर देता है। 'ख' 'क' को 50 रु. देने का वचन देता है। यह एक वैध संविदा है।

(2) 'अ' 'ब' की अवयस्क लड़की का भरणपोषण करता है। इसके लिए 'ब' 'अ' के खर्चे को देने का वचन देता है, यह भी एक वैध संविदा है।

इस संबंध में सिधा बनाम अब्राहम[29] का वाद बहुत महत्वपूर्ण है। इस वाद में वादी ने प्रतिवादी की अवयस्कता में आर्थिक सहायता की जो वयस्क होने तक जारी रही। प्रतिवादी ने इन सेवाओं के बदले प्रतिफल के रूप में वादी को 125 रु. मासिक देने का वचन दिया। बाद में जब वह धन वादी को प्राप्त नहीं हुआ तो उसने न्यायालय में वाद प्रस्तुत किया। न्यायालय ने निर्णय दिया कि वादी धन वसूल करने का अधिकारी है।

भूतकालीन प्रतिफल एवं निष्पादित प्रतिफल :

निष्पादित प्रतिफल एवं भूतकालीन प्रतिफल में अन्तर होता है। भूतकालीन प्रतिफल में प्रतिज्ञा का अभाव होता है अर्थात् इसमें कार्य को कर लिया जाता है और वचन बाद में

दिया जाता है जबकि निष्पादित प्रतिफल में केवल वचन की शर्त को पूरा करने के लिए कार्य किया जाता है। जब कोई व्यक्ति किसी वचन की शर्त को पूरा करने के लिये कोई कार्य करता है तो उसे निष्पादित प्रतिफल कहते है। उदाहरण के लिये एक लड़का घर से भाग कर कहीं चला गया उस लड़के के पिता ने लड़के को खोज के लिए 100 रु. इनाम देने की घोषणा की। इस संव्यवहार में उसके लड़के को ढूंढ कर लाने अर्थात् घोषणा में चाहे गये कार्य को करना हो प्रस्ताव को स्वीकृति मानी जायेगा। यही लड़के की खोज का कार्य वचन के लिए प्रतिफल है।

निष्पाद्य प्रतिफल :

निष्पाद्य प्रतिफल वह है जिसमें दोनों पक्षकारों ने अपनी तरफ से वचन ही दिया है और उनका अभी निष्पादन नहीं किया किया गया है। इसमें एक पक्षकार का वचन दूसरे पक्षकार के लिये प्रतिफल होता है। उदाहरण के लिये 'अ' 'ब' से एक निश्चित मूल्य पर कोई वस्तु खरीदने का वचन देता है और 'ब' 'अ' को उस वस्तु को बेचने का वचन देता है। यहां दोनों पक्षकारों के वचनों का आदान-प्रदान हो एक दूसरे के लिये निष्पाद्य प्रतिफल है।

4. प्रतिफल विधि की निगाह में मूल्याकन होना चाहिये :

प्रतिफल वही वैध माना जायेगा जो विधि का दृष्टि में वैध होगा। प्रतिफल वह कार्य, वचन अथवा परिवतन (abstinence) है जो वचनदाता की इच्छा पर वचन ग्रहीता अथवा अन्य कोई व्यक्ति देता है ऐसा कार्य यदि विधि की दृष्टि में मूल्यवान नहीं है तो वह वैध प्रतिफल नहीं होगा। इस संबंध में एक महत्वपूर्ण वाद व्हाईट बनाम ब्ल्यूट[30] का है। इस वाद में प्रतिवादी ने अपने पिता से कुछ धन उदार लिया तथा उसके लिये उसने एक प्रोनोट लिखकर दिया। प्रतिवादी को अपने पिता से सदैव यह शिकायत रहती थो कि संपत्ति के विभाजन के समय उसको कम हिस्सा प्राप्त हुआ है। पिता ने प्रतिवादी से कहा कि यदि वह भविष्य में ऐसी शिकायत न करे तो उसका दायित्व प्रोनोट के संबंध में समाप्त कर दिया जायेगा। प्रतिवादी उससे सहमत हो गया और उसने शिकायत करना बन्द कर दिया। न्यायालय के सामने प्रश्न था कि शिकायत का बन्द करना क्या

वास्तव में प्रतिफल था? न्यायालय ने निर्णय दिया कि शिकायत बन्द करना विधि की दृष्टि में मूल्यवान प्रतिफल नहीं था। भारतीय विधि के अन्तर्गत भी न्यायाधीश सुब्बाराव ने चिदम्बरा बनाम पी. एस रंगा[31] के वाद में धारित किया कि प्रतिफल केवल पक्षकारों की दृष्टि में ही मूल्यवान नहीं होना चाहिये। परन्तु न्यायालय पर अथवा विधि की दृष्टि में भी मूल्यवान होना चाहिये। कुलसेकर पेरूमल बनाम पथाकुट्टा[32] के वाद में मद्रास उच्च न्यायालय ने भी घोषित किया कि भारतीय संविदा अधिनियम के उपबन्धों के अन्तर्गत प्रतिफल न केवल मूल्यवान होना चहिये अपितु विधि की दृष्टि में महत्वपूर्ण और मूल्यवान होना चाहिये। प्रतिफल वास्तविक होना चाहिये, भ्रमात्मक नहीं होना चाहिये।

प्रतिफल का पर्याप्त होना आवश्यक नहीं है :

न्यायालय का कार्य यह देखना नहीं है कि प्रतिफल पर्याप्त है अथवा नहीं। न्यायालय सिर्फ यह देखेगा कि वचन में प्रतिफल मूल्यवान है अथवा नहीं यदि संविदा का एक पक्षकार स्वेच्छा से संविदा के अनुसार अपने वचन का मूल्य प्राप्त कर लेता है तो विधि का काम यह नहीं है कि वह वचन के मूल्य का औचित्य देखे। प्रतिफल पर्याप्त है अथवा नहीं इस आधार पर संविधा को शून्य घोषित नहीं किया जा सकता। इसलिए भारतीय संविदा अधिनियम की धारा 25 की व्याख्या नंबर 2 में यह स्पष्ट किया गया है कि यदि किसी संविदा में वचनदाता ने अपनी स्वतंत्र सहमति से संविदा किया है तो वह इसलिये अवैध नहीं होगा कि उसमें प्रतिफल पर्याप्त नहीं है।

वाद से विरति :

यदि किसी व्यक्ति को अन्य व्यक्ति पर वाद चलाने का अधिकार है और वह अन्य व्यक्ति की प्रार्थना पर वाद चलाने के अधिकार का प्रयोग नहीं करता है। तो इस प्रकार से किसी वाद से विरति रहना एक मूल्यवान प्रतिफल माना जायेगा। इस संबंध में देवी राधारानी बनाम रामदास[33] का वाद महत्वपूर्ण है। इस वाद में पत्नी को पति के विरुद्ध वाद चलाने का अधिकार प्राप्त था। पति ने पत्नि से कहा यदि वह न्यायालय में वाद न

चलाये तो वह उसको प्रतिमाह भरणपोषण के लिये कुछ राशि देता रहेगा। पत्नी से पति के इस वचन से सहमत होकर वाद नहीं चलाया न्यायालय ने निर्णय देते हुए कहा कि पत्नि का वाद से विरत रहना ही पति के वचन के लिए पर्याप्त प्रतिफल है।

समझौते के वाद :

किसी वाद को समझौते के द्वारा समाप्त कर देना वादी के लिये वैध प्रतिफल है। इसके लिये आवश्यक यह है कि वाद सही हो। इस संबध में विक्रम बनाम अमरसूर्य[34] के वाद में प्रिवीकाउंसील ने निर्णय देते हुए कहा यदि वास्तविक है तो न्यायालय द्वारा लागू किया जायेगा यदि किसी वाद में व्यक्ति का अधिकार संतोषप्रद है फिर भी समझौते वैध प्रतिफल माने जायेंगे।

वचनदाता के साथ किया हुआ पूर्व संविदा :

यदि वचन दाता किसी संविदा के अंतर्गत पहले से ही कोई कार्य करने के लिये बाध्य है तथा वह उसी कार्य को करने के लिये कोई अन्य प्रतिज्ञा करता है तो ऐसी प्रतिज्ञा एक वैध प्रतिफल नहीं हो सकती।

क्या संविदा में उल्लेखित राशि से कम राशि स्वीकार करना एक अच्छा प्रतिफल है ?

यदि किसी संविदा में उल्लेखित राशि से कम राशि देने का वचन दिया जाता है तो वह वचन के लिए वैध प्रतिफल नहीं माना जायेगा। इस सिद्धान्त का प्रतिपादन पीनेल बनाम कोल[35] में प्रतिपादित किया गया। इस वाद में न्यायालय ने निर्णय देते हुए कहा कि यदि कोई व्यक्ति अधिक धनराशि के स्थान पर कम धनराशि देने का वचन देता है तो कम धनराशि का देना वचन के लिए उचित प्रतिफल नहीं माना जायेगा। कम राशि का भुगतान इसलिये भुगतान नहीं माना जा सकता क्योंकि पूर्ण भुगतान करने के लिए वह पहले से ही उत्तरदायी है। परन्तु पूर्ण धनराशि के बदले सामान दिया जाये तो वह वचन के लिये पर्याप्त प्रतिफल माना जा सकता है। उदाहरण के लिये 'अ' 'ब' से 100 रु. के बदले में एक घोड़ा लेता है तो वह 100 रु. के बदले में उचित प्रतिफल माना जायेगा। इसका कारण यह है कि वस्तु

की कीमत ऋणदाता की दृष्टि में धनराशि से अधिक हो सकती है। इसके अलावा यह भी कारण है कि यदि संविदा की राशि से कम राशि पर्याप्त प्रतिफल मान ली जायेगी तो इससे व्यापार के विकास में हानि होगी। इस सिद्धान्त की आलोचना फोक्स बनाम बीयर 36 के वाद में की गयी। इसी प्रकार 1937 में विधि सुधार समिति ने अपनी रिपोर्ट में कहा कि इस सिद्धान्त को व्यापक उन्नति की दृष्टि से समाप्त कर दिया जाना चाहिये। परन्तु अंग्रेजी विधि में इस सिद्धान्त को समाप्त नहीं किया गया है। परन्तु इसकी कठोरता को कुछ अपवादों का सृजन करके शिथिल अवश्य कर दिया है।

इस सिद्धान्त के अपवाद :

(1) यदि दोनों पक्षकारों के मध्य यह संविदा होता है कि पूर्ण ऋणों के स्थान पर कम ऋण लेना स्वीकार कर लिया जायेगा तो यह एक वैध प्रतिफल माना जायेगा। तथा ऋण दाता को शेष ऋण की वसूली से वंचित कर दिया जायेगा।

(2) यदि संविदा में उल्लेखित निश्चित समय से पूर्व पूर्ण भुगतान के स्थान पर कम भुगतान दे दिया जाता है तो वह पूर्ण ऋण से मुक्त करने के लिए अच्छा प्रतिफल माना जायेगा।

(3) यदि ऋण के स्थान पर कोई अन्य वस्तु दे दी जाती है तो ऋणदाता उससे बाध्य होगा तथा वह अपने ऋण के लिये वाद लाने से वंचित कर दिया जायेगा।

(4) विबंधन के सिद्धान्त के आधार पर भी ऐसे कम प्रतिफल को पूर्ण प्रतिफल मान लिया जायेगा। यह सिद्धान्त महत्वपूर्ण सिद्धान्त है।

5. विबन्धन का सिद्धान्त : (Promissory Estoppel)

इस सिद्धान्त की स्थापना 1877 में ह्यूज बनाम मैट्रोपोलिटन रेल्वे कं. 37 के वाद में हुई। इस वाद में एक जमीदार ने एक पट्टेदाता को एक नोटिस देकर यह सूचित किया कि वह छः महीने की अवधि के अन्तर्गत पट्टे में दी हुई भूमि की मरम्मत करा ले। यदि वह ऐसा नहीं करेगा। तो उसका पट्टा समाप्त कर दिया जायेगा। एक महीने के पश्चात् जमीदार तथा

किरायेदार दोनों में पट्टे की भूमि के विक्रय के बारे में बातचीत हुई अतः इस बीच में किरायेदार ने मरम्मत का कोई कार्य शुरू नहीं किया। दोनों में इस विक्रय संबंध में वार्तालाप असफल होने में छः महीने का समय समाप्त हो गया। जमींदार ने किरायेदार के विरुद्ध न्यायालय में वाद प्रस्तुत करके पट्टे को समाप्त करना चाहा। न्यायालय ने निर्णय दिया कि जमींदार का वार्तालाप करने का तात्पर्य था कि जब तक वार्तालाप समाप्त न हो जाये नोटिस की अवधि लागू नहीं होगी। किरायेदार ने इस विश्वास से मरम्मत का कार्य शुरू नहीं किया था कि विक्रय पूरा हो जायेगा।

विबंधन के सिद्धान्त के संबध में सेन्ट्रल प्रापटी ट्रस्ट लि. बनाम हाइट्रीज हाउस लि.[38] का वाद भी महत्वपूर्ण है। इस वाद में वादी ने प्रतिवादी को 1937 में कुछ मकान 25 हज़ार पौण्ड में किराये पर दिये। 1940 में युद्ध की स्थिति के कारण बहुत से मकान खाली हो गये। ऐसे में वादी ने प्रतिवादी से आधा किराया वसूल करना स्वीकार कर लिया। 1945 में युद्ध समाप्ति के पश्चात् तथा स्थिति सामान्य होने के पश्चात् मकान पुनः भरने लगे। वादी ने प्रतिवादी के विरुद्ध अब भविष्य में पूरा किराया वसूल करने तथा 1945 के वर्ष का पूरा किराया वसूल करने का वाद प्रस्तुत किया। न्यायाधीश डैनिंग (Denning, J.) ने निर्णय दिया कि वादी पूरा किराया प्राप्त कर सकता है। न्यायाधीश ने यह भी कहा कि प्रस्तुत वाद में दोनों पक्षों का इरादा केवल अस्थाई समय के लिये किराया कम करने का था न कि सदैव के लिए। अतः वादी 1945 के वर्ष का तथा भविष्य के समय के लिए पूरा किराया वसूल करने का अधिकारी है। न्यायाधीश ने यह भी कहा कि यदि वादी 1940 और 1945 के बीच के समय के लिये पूरा किराया वसूल करने का वाद प्रस्तुत करता तो वह विबंधन के सिद्धान्त के आधार पर पूरा किराया वसूल करने में असमर्थ रहता।

भारत में विबंधन के सिद्धान्त की स्थिति :

विबंधन का सिद्धान्त भारतीय संविदा विधि में भी न्यायालय द्वारा लागू किया गया है। सत्यनारायण बनाम भारत संघ[39] का वाद इस सिद्धान्त के संबंध में एक महत्वपूर्ण वाद है। इस वाद में वादी दिल्ली में तीन मंजिल के मकान का मालिक था जिसका क्षेत्रफल

करीब-करीब 30 बीघा था भारत सरकार ने भारत सुरक्षा अधिनियम के अन्तर्गत 6 जून, 1944 को इस मकान पर कब्जा कर लिया। 6 जून को मकान मालिक को सूचित किया कि वह मकान का आधिपत्य दे दे। वादी ने 20 जून को मकान का आधिपत्य दे दिया और सरकार के कहने पर कुछ अन्य सुविधाएं भी प्रदान कर दीं जिनकी कीमत 10 हजार रु. आंकी गयी। बाद में वादी ने सरकार से 50 हजार रु. और 10 हजार रु. व सुविधाओं के बदले प्रतिफल की मांग की किन्तु सरकार ने इसके लिये इंकार कर दिया। न्यायालय ने उक्त वाद में विबंधन का सिद्धान्त लागू नहीं किया। न्यायाधीश टेकचन्द ने निर्णय देते हुए कहा कि भारत में ऐसा कोई निर्णय नहीं दिया गया है जिसके आधार पर भविष्य की प्रतिज्ञा पर विबंधन लागू किया गया हो।

प्रतिफल के बिना कोई वैध समझौता नहीं हो सकता।

नियम के अपवाद :

सामंड एवं बिनफील्ड के अनुसार बिना प्रतिफल के दिया गया वचन एक उपहार होता है जबकि प्रतिफल के बदले में दिया गया वचन एक वैध संविदा होता है अर्थात् प्रतिफल रहित प्रतिज्ञा किसी प्रकार का दायित्व उत्पन्न नहीं करती। भारतीय संविदा अधिनियम की धारा 25 भी यह घोषित करती है कि बिना प्रतिफल के संविदा शून्य करार होता है। परन्तु इस सिद्धान्त में अंग्रेजी और भारतीय विधि में कुछ अपवाद है।

अंग्रेजी विधि में अपवाद :

अंग्रेजी विधि के अन्तर्गत दो प्रकार के संविदा होते हैं। साधारण संविदा तथा मुद्रा के अन्तर्गत किया गया संविदा। मुद्रा के अन्तर्गत किये गये संविदा बिना प्रतिफल के भी विधि द्वारा प्रवर्तनीय होता है। मुद्रा के अन्तर्गत किया गया संविदा से तात्पर्य ऐसे संविदा से है जो लिखित हो=हस्ताक्षरित हो तथा उन पर मुद्रा अंकिती होती है।

भारतीय विधि के अन्तर्गत अपवाद :

भारतीय संविदा अधिनियम की धारा 25 के अन्तर्गत तीन प्रकार के अपवादों का उल्लेख किया गया है अर्थात् निम्नलिखित तीन प्रकार के संविदा बिना प्रतिफल के भी वैध संविदा माने जायेंगे।

(1) स्वभाविक प्रेम तथा स्नेह के कारण दिया गया वचन :

जब कोई संविदा पक्षकारों के स्वाभाविक प्रेम और स्नेह के आधार पर निकट संबंध के कारण तथा लिखित रूप में किया गया हो एवं वह पंजीकृत करवा दिया गया हो तो इस प्रकार का संविदा बिना प्रतिफल के भी वैध संविदा माना जायेगा।

धारा 25 (1) में तीन तथ्यों का होना आवश्यक है :

अ संविदा लिखित और पंजीकृत होनी चाहिये।

ब संविदा प्राकृतिक प्रेम और स्नेह के फलस्वरूप होनी चाहिये।

स संविदा दोनों पक्षकारों के निकट संबंध के कारण होनी चाहिये।

इस संबंध में राजलखी देवी बनाम भूतनाथ मुकर्जी[40] का एक महत्वपूर्ण वाद है। इस वाद में प्रतिवादी (पति) ने अपनी पत्नी को कुछ धन भरणपोषण तथा अलग रहने के लिये देने का वचन दिया। यह संविदा लिखित एवं पंजीकृत भी था। परन्तु इस संविदा में पति–पत्नी के मध्य झगड़े की कोई चर्चा नहीं की गयी थी। पत्नी द्वारा पति पर भरणपोषण राशि को वसूल करने के लिये जब वाद प्रस्तुत किया गया तो न्यायालय ने तथ्यों को जानने के पश्चात् निर्णय किया कि इस वाद में प्राकृतिक प्रेम और स्नेह का अभाव था अतः यह प्रतिफल का अपवाद नहीं हो सकता और पति को दायित्व से मुक्त किया।

(2) स्वेच्छा से किये गये कार्यों की क्षतिपूर्ति के लिये दिया गया वचन :

जब संविदा किसी ऐसे व्यक्ति को पूर्ण या आंशिक क्षतिपूर्ति के संबंध में हो जिसमें वचनदाता के लिये ऐच्छिक रूप से कोई सेवा की हो। कार्य स्वेच्छापूर्वक किया जाना चाहिये तथा उस वचनदाता के लिये किया गया होना चाहिये जिसका कार्य के समय अस्तित्व था। इसके साथ ही वचनदाता का उद्देश्य वचनग्रहीता को क्षतिपूर्ति होना चाहिये। उदाहरण के लिये राम को श्याम का बटुआ मिला। राम द्वारा बटुआ लिये जाने पर श्याम ने उसे 100 रु. का इनाम देने का वचन दिया यहां बिना किसी प्रकार के औपचारिक प्रतिफल के भी यह संविदा वैध संविदा है।

(3) कालतिरोहित ऋणों के भुगतान का वचन :

जब कोई ऋणी अपने हस्ताक्षरों से किसी कालतिरोहित ऋणों को चुकाने की प्रतिज्ञा करता है तो यह नयी प्रतिज्ञा या वचन बिना नये प्रतिफल के भी वैध होगा। नयी प्रतिज्ञा के लिए नया प्रतिफल का होना जरूरी नहीं है परन्तु कालतिरोहित ऋण की देय राशि निश्चित होनी चाहिये तथा उसके भुगतान के लिये निश्चित एवं स्पष्ट प्रतिज्ञा की जानी चाहिये।

उपरोक्त के अलावा भारतीय संविदा अधिनियम की धारा 185 के अन्तर्गत अभिकर्ता स्थापित करने के संविदाओं के लिये भी किसी प्रकार के प्रतिफल की आवश्यकता नहीं है।

इसी प्रकार संपत्ति अन्तरण अधिनियम के अन्तर्गत किसी व्यक्ति ने यदि लिखित एवं पंजीकृत विलेख द्वारा किसी संपत्ति का किसी व्यक्ति को अथवा संस्था को दान किया है तो वह व्यक्ति उस संपत्ति को प्रतिफल के बिना हस्तान्तरित किये जाने के कारण वापस नहीं मांग सकता।